



**International Journal of Multidisciplinary
and Scientific Emerging Research (IJMSERH)**

Volume 11, Issue 2, April - June 2023

Impact Factor: 8.325



समकालीन हिंदी आलोचना में सामाजिक सरोकार : एक अध्ययन

अमिता जैन

सह आचार्य, हिंदी साहित्य

चौधरी बल्लू राम गोदारा राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्रीगंगानगर

सारांश

समकालीन हिंदी आलोचना में सामाजिक सरोकार एक महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि आधुनिक समय में साहित्य को केवल सौंदर्य, भाषा और शैली के आधार पर नहीं देखा जाता, बल्कि उसे समाज, जीवन और समय की वास्तविक परिस्थितियों से जोड़कर भी समझा जाता है। समकालीन हिंदी आलोचना ने साहित्य के माध्यम से समाज में उपस्थित असमानता, अन्याय, शोषण, स्त्री-विमर्श, दलित चेतना, आदिवासी जीवन, किसान-मजदूर समस्याएँ, बाजारवाद, वैश्वीकरण और सांस्कृतिक बदलाव जैसे मुद्दों को गंभीरता से उठाया है। इस आलोचना का उद्देश्य केवल साहित्यिक कृतियों का मूल्यांकन करना नहीं है, बल्कि उनके सामाजिक महत्व और प्रभाव को भी स्पष्ट करना है। हिंदी आलोचना की समकालीन दृष्टि मानवीय मूल्यों, लोकतांत्रिक चेतना और सामाजिक न्याय को विशेष महत्व देती है। इसमें साहित्य को समाज का दर्पण मानते हुए यह समझने का प्रयास किया जाता है कि रचनाकार अपने समय की समस्याओं, संघर्षों और बदलावों को किस रूप में प्रस्तुत करता है। समकालीन आलोचना में स्त्री, दलित, आदिवासी और वंचित वर्गों की आवाज को साहित्यिक विमर्श के केंद्र में लाने का प्रयास भी दिखाई देता है। इस प्रकार यह आलोचना साहित्य को जनजीवन से जोड़ती है और समाज में जागरूकता पैदा करने का कार्य करती है। प्रस्तुत शोध-पेपर में समकालीन हिंदी आलोचना के सामाजिक स्वरूप, प्रमुख सरोकारों और उसके महत्व का अध्ययन किया गया है। साथ ही यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि हिंदी आलोचना वर्तमान समाज की समस्याओं को समझने और साहित्य के माध्यम से उनके समाधान की दिशा में विचार करने का एक प्रभावी माध्यम है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि समकालीन हिंदी आलोचना ने साहित्य को समाज से जोड़कर उसे अधिक प्रासंगिक, मानवीय और उत्तरदायी बनाया है।

मूल शब्द : समकालीन हिंदी आलोचना, सामाजिक सरोकार, वंचित वर्ग, मानवीय मूल्य

प्रस्तावना :

हिंदी साहित्य में आलोचना का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। आलोचना केवल किसी साहित्यिक रचना की अच्छाइयों और कमियों को बताने का कार्य नहीं करती, बल्कि वह रचना के उद्देश्य, प्रभाव, सामाजिक संदर्भ और मानवीय मूल्यों को भी स्पष्ट करती है। समय के साथ हिंदी आलोचना का स्वरूप भी बदलता रहा है। आरंभिक दौर में जहाँ आलोचना का मुख्य आधार भाषा, शैली, रस, अलंकार और साहित्यिक सौंदर्य माना जाता था, वहीं समकालीन दौर में आलोचना का संबंध समाज, संस्कृति, राजनीति, अर्थव्यवस्था और आम जनजीवन से अधिक गहरा हो गया है। इसी कारण समकालीन हिंदी आलोचना में सामाजिक सरोकारों की चर्चा विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है। समकालीन हिंदी आलोचना साहित्य को समाज से अलग करके नहीं देखती। वह यह समझने का प्रयास करती है कि कोई साहित्यिक रचना अपने समय की सामाजिक परिस्थितियों को किस प्रकार व्यक्त करती है। आज का समाज अनेक प्रकार की चुनौतियों से गुजर रहा है। सामाजिक असमानता, जातिगत भेदभाव, स्त्री उत्पीड़न, दलित और आदिवासी समुदायों की समस्याएँ, किसान-मजदूर वर्ग की पीड़ा, बेरोजगारी, बाजारवाद, उपभोक्तावाद और सांस्कृतिक परिवर्तन जैसे प्रश्न साहित्य में बार-बार सामने आते हैं। समकालीन हिंदी आलोचना इन प्रश्नों को गंभीरता से देखती है और साहित्य में उनकी अभिव्यक्ति का मूल्यांकन करती है। आधुनिक समय में साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन या भावनात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं माना जाता। साहित्य समाज की वास्तविकताओं को सामने लाने, अन्याय के विरुद्ध चेतना पैदा करने और मानवीय संवेदना को मजबूत करने का माध्यम भी है। इसी दृष्टि से समकालीन आलोचना यह देखती है कि साहित्य में आम आदमी का जीवन, उसकी समस्याएँ, संघर्ष और आकांक्षाएँ किस रूप में प्रस्तुत हुई हैं। इस आलोचना में समाज के हाशिए पर खड़े वर्गों की आवाज को विशेष महत्व दिया गया है। दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श और श्रमिक जीवन से जुड़े विषय इसी सामाजिक दृष्टि के प्रमुख उदाहरण हैं। समकालीन हिंदी आलोचना में सामाजिक सरोकारों की उपस्थिति यह स्पष्ट करती है कि साहित्य अपने समय से गहराई से जुड़ा होता है। आलोचक का कार्य केवल रचना की व्याख्या करना नहीं, बल्कि उसके सामाजिक महत्व को भी सामने लाना है। जब आलोचना साहित्य में छिपे सामाजिक यथार्थ, संघर्ष और परिवर्तन की संभावनाओं को पहचानती है, तब वह साहित्य को अधिक प्रासंगिक और जनोन्मुख बनाती है। इसलिए समकालीन हिंदी आलोचना को समझने के लिए उसके सामाजिक सरोकारों का अध्ययन आवश्यक है।

शोध के उद्देश्य :

शोध-पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित है-

1. समकालीन हिंदी आलोचना के स्वरूप और उसकी सामाजिक दृष्टि को समझना।
2. हिंदी आलोचना में समाज, संस्कृति और आम जनजीवन से जुड़े मुद्दों का अध्ययन करना।
3. समकालीन हिंदी आलोचना में दलित, स्त्री, आदिवासी, किसान और मजदूर वर्ग से संबंधित सरोकारों का विश्लेषण करना।
4. हिंदी आलोचना में सामाजिक न्याय, समानता, लोकतांत्रिक मूल्यों और मानवीय संवेदना के महत्व को स्पष्ट करना।
5. यह समझना कि समकालीन हिंदी आलोचना साहित्य को समाज से जोड़ने में किस प्रकार महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

शोध प्रविधि :

प्रस्तुत शोध-पेपर “समकालीन हिंदी आलोचना में सामाजिक सरोकार : एक अध्ययन” मुख्य रूप से वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इस अध्ययन में समकालीन हिंदी आलोचना के स्वरूप, उसके सामाजिक पक्ष तथा साहित्य और समाज के संबंध को समझने का प्रयास किया गया है। इस शोध में द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। इसके अंतर्गत हिंदी आलोचना से संबंधित पुस्तकों, शोध-पत्रों, पत्र-पत्रिकाओं, आलोचनात्मक लेखों और उपलब्ध साहित्यिक सामग्री का अध्ययन किया गया है। इन स्रोतों के आधार पर यह समझने का प्रयास किया गया है कि समकालीन हिंदी आलोचना में सामाजिक असमानता, स्त्री-विमर्श, दलित चेतना, आदिवासी जीवन, किसान-मजदूर समस्याएँ, बाजारवाद और मानवीय मूल्यों जैसे विषयों को किस प्रकार प्रस्तुत किया गया है।

समकालीन हिंदी आलोचना का स्वरूप और सामाजिक दृष्टि :

समकालीन हिंदी आलोचना का स्वरूप पहले की तुलना में अधिक व्यापक, सामाजिक और जीवन-केन्द्रित दिखाई देता है। यह आलोचना केवल रचना की भाषा, शैली, शिल्प और सौंदर्य तक सीमित नहीं रहती, बल्कि रचना के सामाजिक संदर्भों को भी महत्व देती है। समकालीन आलोचना यह देखने का प्रयास करती है कि कोई साहित्यिक कृति अपने समय की सामाजिक परिस्थितियों, संघर्षों और समस्याओं को किस रूप में व्यक्त करती है। इसमें साहित्य को समाज

से अलग नहीं माना जाता, बल्कि साहित्य को सामाजिक जीवन का संवेदनशील दर्पण समझा जाता है। आधुनिक समय में समाज तेजी से बदल रहा है। जाति, वर्ग, लिंग, बाजार, राजनीति, संस्कृति और पहचान से जुड़े अनेक प्रश्न साहित्य में प्रमुखता से सामने आए हैं। समकालीन हिंदी आलोचना इन प्रश्नों को गंभीरता से समझने और उनकी व्याख्या करने का कार्य करती है। इसकी सामाजिक दृष्टि साहित्य में उपस्थित आम आदमी की पीड़ा, संघर्ष, आशा और आकांक्षाओं को पहचानती है। यह आलोचना उन वर्गों की आवाज को भी महत्व देती है, जिन्हें लंबे समय तक साहित्य और समाज में उपेक्षित रखा गया। इस दृष्टि से समकालीन हिंदी आलोचना अधिक लोकतांत्रिक और जनपक्षीय दिखाई देती है। इसका उद्देश्य केवल साहित्यिक मूल्यांकन करना नहीं, बल्कि साहित्य के सामाजिक अर्थ और उपयोगिता को स्पष्ट करना भी है। इसलिए समकालीन हिंदी आलोचना का स्वरूप सामाजिक चेतना, मानवीय संवेदना और परिवर्तन की भावना से जुड़ा हुआ है।

हिंदी आलोचना में समाज, संस्कृति और जनजीवन की अभिव्यक्ति :

हिंदी आलोचना में समाज, संस्कृति और जनजीवन की अभिव्यक्ति अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष है। साहित्य समाज से जन्म लेता है और समाज की परिस्थितियों से प्रभावित होता है। इसलिए हिंदी आलोचना का एक मुख्य कार्य यह देखना है कि साहित्य में सामाजिक जीवन किस रूप में प्रस्तुत हुआ है। समकालीन हिंदी आलोचना रचना में उपस्थित सामाजिक संबंधों, पारिवारिक संरचना, सांस्कृतिक परंपराओं, लोकजीवन, रीति-रिवाजों और बदलती जीवन-शैली का विश्लेषण करती है। आज का जनजीवन अनेक स्तरों पर परिवर्तन से गुजर रहा है। ग्रामीण समाज, शहरी जीवन, मध्यवर्गीय मानसिकता, बेरोजगारी, पलायन, पारिवारिक टूटन और सांस्कृतिक बदलाव जैसे विषय साहित्य में प्रमुख रूप से दिखाई देते हैं। आलोचना इन विषयों को केवल घटनाओं के रूप में नहीं देखती, बल्कि उनके पीछे छिपे सामाजिक कारणों और प्रभावों को भी समझने का प्रयास करती है। हिंदी आलोचना संस्कृति को स्थिर वस्तु नहीं मानती, बल्कि उसे बदलते समय के साथ विकसित होने वाली प्रक्रिया मानती है। इसी कारण लोकसंस्कृति, लोकभाषा, लोकसंवेदना और आम जन की जीवन स्थितियाँ आलोचना के केंद्र में आती हैं। समकालीन आलोचना यह भी देखती है कि साहित्य में जनजीवन की अभिव्यक्ति कितनी वास्तविक, संवेदनशील और प्रभावी है। इस प्रकार हिंदी आलोचना साहित्य को समाज और संस्कृति से जोड़कर उसकी व्यापकता को सामने लाती है।

समकालीन आलोचना में वंचित वर्गों के सामाजिक सरोकार :

समकालीन हिंदी आलोचना में वंचित वर्गों के सामाजिक सरोकारों को विशेष स्थान प्राप्त हुआ है। पहले साहित्य और आलोचना में मुख्य रूप से उच्च और मध्यवर्गीय जीवन को अधिक महत्व मिलता था, लेकिन समकालीन दौर में दलित, स्त्री, आदिवासी, किसान, मजदूर और अन्य हाशिए के वर्गों के जीवन को गंभीरता से समझा जाने लगा है। इस आलोचना ने उन आवाजों को केंद्र में लाने का प्रयास किया है, जिन्हें लंबे समय तक दबाया या अनदेखा किया गया। दलित साहित्य और आलोचना ने जातिगत शोषण, अपमान, असमानता और अधिकारों के प्रश्न को प्रमुखता से उठाया। स्त्री-विमर्श ने पितृसत्ता, लैंगिक भेदभाव, स्त्री-अस्मिता और स्वतंत्रता के मुद्दों को सामने रखा। आदिवासी विमर्श में प्रकृति, संस्कृति, विस्थापन और अस्तित्व से जुड़े प्रश्न प्रमुख बने। इसी प्रकार किसान और मजदूर वर्ग के जीवन में गरीबी, श्रम, शोषण, असुरक्षा और संघर्ष की स्थितियाँ भी समकालीन आलोचना के महत्वपूर्ण विषय बने हैं। यह आलोचना केवल सहानुभूति तक सीमित नहीं रहती, बल्कि इन वर्गों के अधिकार, सम्मान और सामाजिक भागीदारी की आवश्यकता को भी रेखांकित करती है। समकालीन हिंदी आलोचना ने यह स्पष्ट किया है कि साहित्य का वास्तविक महत्व तभी है, जब वह समाज के उपेक्षित वर्गों की पीड़ा और संघर्ष को अभिव्यक्ति दे। इस दृष्टि से वंचित वर्गों के सरोकार समकालीन आलोचना को अधिक सामाजिक, मानवीय और न्यायपूर्ण बनाते हैं।

सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय मूल्यों की स्थापना ;

समकालीन हिंदी आलोचना में सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय मूल्यों की स्थापना एक प्रमुख लक्ष्य के रूप में दिखाई देती है। यह आलोचना साहित्य को केवल कलात्मक अभिव्यक्ति के रूप में नहीं देखती, बल्कि उसे समाज में मानवीय चेतना विकसित करने वाले माध्यम के रूप में समझती है। समाज में जाति, वर्ग, लिंग, धर्म, भाषा और आर्थिक स्थिति के आधार पर अनेक प्रकार की असमानताएँ मौजूद हैं। समकालीन हिंदी आलोचना साहित्य में इन असमानताओं की पहचान करती है और उनके विरुद्ध उठने वाली चेतना को महत्व देती है। यह आलोचना उन रचनाओं को विशेष महत्व देती है, जिनमें मनुष्य की गरिमा, स्वतंत्रता, सम्मान और अधिकारों की बात की जाती है। सामाजिक न्याय का अर्थ केवल कानूनी अधिकारों तक सीमित नहीं है, बल्कि समाज में बराबरी, सम्मान और अवसर की उपलब्धता से भी है। समकालीन आलोचना इस बात पर बल देती है कि साहित्य को शोषित और वंचित मनुष्य के पक्ष में खड़ा होना चाहिए। समानता,

सहिष्णुता, करुणा, संवेदना, लोकतांत्रिक विचार और मानवीय संबंध इसके प्रमुख मूल्य हैं। यह आलोचना समाज में विभाजन और भेदभाव के स्थान पर संवाद, सहयोग और न्यायपूर्ण व्यवस्था की आवश्यकता को रेखांकित करती है। इस प्रकार समकालीन हिंदी आलोचना साहित्य के माध्यम से एक अधिक न्यायपूर्ण, संवेदनशील और मानवीय समाज की कल्पना प्रस्तुत करती है।

समकालीन हिंदी आलोचना का महत्व और प्रासंगिकता :

समकालीन हिंदी आलोचना का महत्व इस बात में निहित है कि यह साहित्य को वर्तमान समाज की समस्याओं और आवश्यकताओं से जोड़ती है। आज का समय सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और वैचारिक परिवर्तनों का समय है। ऐसे समय में आलोचना का कार्य केवल साहित्यिक रचना की व्याख्या करना नहीं, बल्कि उसके सामाजिक अर्थ और प्रभाव को समझना भी है। समकालीन हिंदी आलोचना साहित्य में उपस्थित जीवन-संघर्ष, सामाजिक विसंगतियों, मानवीय संवेदनाओं और परिवर्तन की संभावनाओं को सामने लाती है। यह आलोचना पाठक को केवल रचना पढ़ने तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उसे समाज के प्रति अधिक जागरूक बनाती है। इसकी प्रासंगिकता इसलिए भी बढ़ जाती है क्योंकि आज साहित्य में दलित, स्त्री, आदिवासी, किसान, मजदूर, पर्यावरण, बाजारवाद और सांस्कृतिक संकट जैसे अनेक नए प्रश्न जुड़े हैं। समकालीन आलोचना इन प्रश्नों को समझने की दृष्टि प्रदान करती है। यह साहित्य को जनजीवन से जोड़कर उसे अधिक अर्थपूर्ण और उपयोगी बनाती है। इसके माध्यम से साहित्य का मूल्यांकन केवल सौंदर्य के आधार पर नहीं, बल्कि सामाजिक उपयोगिता और मानवीय प्रभाव के आधार पर भी किया जाता है। समकालीन हिंदी आलोचना समाज में संवेदना, न्याय, समानता और लोकतांत्रिक चेतना को मजबूत करने में सहायक है। इसलिए वर्तमान समय में इसकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है।

निष्कर्ष :

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि समकालीन हिंदी आलोचना में सामाजिक सरोकारों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। आज हिंदी आलोचना केवल साहित्यिक रचना की भाषा, शैली, शिल्प और सौंदर्य तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि वह साहित्य को समाज, संस्कृति, जनजीवन और मानवीय मूल्यों से जोड़कर देखने का कार्य करती है। समकालीन आलोचना यह स्पष्ट करती है कि साहित्य अपने समय की सामाजिक परिस्थितियों, संघर्षों, असमानताओं

और परिवर्तनशील जीवन-मूल्यों से गहराई से प्रभावित होता है। इसलिए किसी भी साहित्यिक कृति का मूल्यांकन उसके सामाजिक संदर्भों को समझे बिना पूर्ण नहीं माना जा सकता।

समकालीन हिंदी आलोचना की सबसे बड़ी विशेषता उसकी जनपक्षीय और लोकतांत्रिक दृष्टि है। यह आलोचना समाज के उन वर्गों की पीड़ा, संघर्ष और आकांक्षाओं को महत्व देती है, जिन्हें लंबे समय तक मुख्यधारा से बाहर रखा गया। दलित, स्त्री, आदिवासी, किसान, मजदूर और अन्य वंचित वर्गों से जुड़े प्रश्न समकालीन आलोचना के केंद्र में आए हैं। इसने साहित्य में केवल उच्च वर्गीय या मध्यवर्गीय जीवन की अभिव्यक्ति को ही पर्याप्त नहीं माना, बल्कि समाज के हाशिए पर स्थित वर्गों के जीवन-संघर्ष को भी साहित्यिक विमर्श का महत्वपूर्ण आधार बनाया।

इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि समकालीन हिंदी आलोचना सामाजिक न्याय, समानता, स्वतंत्रता, मानवीय गरिमा और लोकतांत्रिक चेतना जैसे मूल्यों की स्थापना पर बल देती है। यह आलोचना साहित्य को समाज में जागरूकता पैदा करने वाला माध्यम मानती है। साहित्य के माध्यम से अन्याय, शोषण, भेदभाव, असमानता और सांस्कृतिक संकटों को सामने लाना समकालीन आलोचना का महत्वपूर्ण कार्य है। इस दृष्टि से यह आलोचना केवल साहित्य की व्याख्या नहीं करती, बल्कि समाज को समझने और उसे अधिक संवेदनशील बनाने का भी प्रयास करती है। समकालीन हिंदी आलोचना में समाज, संस्कृति और जनजीवन की अभिव्यक्ति ने साहित्य को अधिक व्यापक और प्रासंगिक बनाया है। ग्रामीण जीवन, शहरीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, बेरोजगारी, पलायन, पारिवारिक बदलाव और सांस्कृतिक संक्रमण जैसे विषयों को आलोचना ने गंभीरता से समझा है। इससे हिंदी साहित्य का दायरा बढ़ा है और साहित्य आम आदमी के जीवन से अधिक गहराई से जुड़ा है। आलोचना ने यह स्थापित किया है कि साहित्य केवल कल्पना या मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना और परिवर्तन का भी प्रभावी साधन है।

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि समकालीन हिंदी आलोचना साहित्य को समाज से जोड़ने वाली एक सशक्त वैचारिक प्रक्रिया है। यह आलोचना साहित्य में मौजूद सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदना और परिवर्तन की संभावनाओं को पहचानती है। इसके माध्यम से साहित्य अधिक उत्तरदायी, जनोन्मुख और समय-सापेक्ष बनता है। वर्तमान समय में जब समाज अनेक प्रकार की असमानताओं, चुनौतियों और सांस्कृतिक परिवर्तनों से गुजर रहा है, तब समकालीन हिंदी आलोचना की भूमिका और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। यह आलोचना साहित्य के माध्यम से न्यायपूर्ण, समानतामूलक और मानवीय समाज की दिशा में विचार करने की प्रेरणा देती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. शुक्ल, रामचंद्र. (2007). हिंदी साहित्य का इतिहास. नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन।
2. द्विवेदी, हजारीप्रसाद. (2008). हिंदी साहित्य की भूमिका. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
3. शर्मा, रामविलास. (2001). मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
4. सिंह, नामवर. (2009). वाद विवाद संवाद. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
5. सिंह, नामवर. (2010). कविता के नए प्रतिमान. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
6. वाजपेयी, नंददुलारे. (2006). हिंदी साहित्य : बीसवीं शताब्दी. नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन।
7. पांडेय, मैनेजर. (2012). साहित्य और समाज. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
8. चौहान, शिवदान सिंह. (2005). साहित्य की परख. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
9. नवल, नंदकिशोर. (2011). हिंदी आलोचना का विकास. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
10. थापर, रोमिता. (2014). संस्कृति और समाज. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।



INTERNATIONAL
STANDARD
SERIAL
NUMBER
INDIA



SJIF Scientific Journal Impact Factor



International Journal of Multidisciplinary and Scientific Emerging Research (IJMSE RH)

Impact Factor: 8.325

✉ ijmserh@gmail.com

🌐 www.ijmserh.com